सदानन्द की छोटी दुनिया

सत्यजीत राय

सदानन्द की छोटी दुनिया

सदानन्द की छोटी दुनिया

सत्यजीत राय

आवरण एवं रेखांकन : रामबाबू

अनुराग ट्रस्ट

सदानन्द की छोटी दुनिया

आज मेरा मन खुश है, इसलिए सोचता हूँ, तुम लोगों को राज़ की बात बता दूँ। जानता हूँ, तुम लोग मेरी बात पर यकीन करोगे। तुम लोग इन लोगों के जैसे नहीं हो। इन लोगों का खयाल है, मेरी सारी बातें झूठी और बनावटी हैं। यही वजह है, मैं इन लोगों से अब बातचीत नहीं करता।

अभी दोपहर है, इसलिए ये लोग मेरे कमरे में नहीं हैं। तीसरे पहर आएँगे। अभी यहाँ मैं हूँ और मेरा मित्र लालबहादुर है लालबहादुर सिंह। उफ़, कल उसने मुझे कितनी चिंता में डाल दिया था मेरा यह ख्याल था ही नहीं कि फिर लौटकर आएगा। वह बड़ा ही अक्लमंद है, इसलिए भागकर उसने अपनी जान बचा ली। कोई दूसरा होता तो अब तक मर कर भूत हो चुका होता।

लो, मित्र का नाम तो बता दिया मगर अपना नाम बताया ही नहीं। मेरा नाम सदानन्द चक्रवर्ती। सुनने से दाढ़ीवाले बूढ़े, जैसा क्या नहीं लगता हूँ? दरअसल मेरी उम्र तेरह साल है। नाम यदि बूढ़े जैसा है तो मैं क्या करूँ? मैंने खुद तो अपना नाम रखा नहीं, रखा है मेरी दादी अम्मा ने।

इतना जरूर है कि उन्हें अगर पता होता कि नाम के कारण मुझे परेशानी में पड़ना होगा तो वे मेरा नाम कुछ और ही रखतीं। उन्हें यह मालूम नहीं था कि लोग मेरे पीछे पड़ जाएँगे और कहेंगे, "तेरा ही नाम सदानन्द है न?"

काश। उनमें थोड़ी भी अक्ल होती। सियार की तरह सिर्फ खों-खों कर हँसने से ही क्या खुशी हासिल होती है? सभी तरह की खुशियों में क्या हँसा जाता है या हँसना उचित है?

जैसे, मान लो तुम बिना कुछ सोचे-विचारे जमीन में एक लकड़ी गाड़ देते हो, एक फतिंगा उड़ता हुआ आता है और उस लकड़ी के ऊपर बैठ जाता है। यह तो बहुत मजेदार बात है। मगर इसको देखकर अगर तुम हो-हो कर हँसने लगते हो, तो लोग तुम्हें पागल ही कहेंगे। इसी तरह से मेरे एक पगले दादा जी थे। मैंने उन्हें देखा नहीं है, मगर बाबूजी से सुना है कि वे बेवजह हँसा करते थे। आखिर में जब उनका पागलपन बहुत बढ़ गया, तो बाबूजी, छोटे चाचा और अविनाश चाचा ने मिलकर उन्हें साँकल से बाँध दिया। उस समय भी वे इतना हँसते थे, इतना कि क्या कहूँ।

जानते हो असली बात क्या है? मुझे जिन चीजों में दिलचस्पी है, ज्यादातर लोगों के ध्यान में वे चीजें आती ही नहीं। अपने बिस्तर पर लेटे-लेटे ही मैं बहुत सी मज़ेदर चीजें देखता रहता हूँ। बीच-बीच में खिड़की के रास्ते से कमरे के अन्दर सेमल का बीज उडकर चला आता है। उसमें लंबा रोआँ रहता है, और वह रोआँ इधर-उधर उड़ता रहता है। वह बडी ही मजेदार चीज है,हो सकता है वह एक बार तुम्हारे चेहरे के पास उड़ता हुआ आए। तुम जैसे ही एक बार फूँक मारोगे, वह झट से उड़कर शहती की तरफ़ चला जाएगा।

और खिड़की पर अगर एक कौवा आकर बैठे तो उधर देखने पर तुम्हें लगेगा कि यह तो सर्कस का मसखरा है। कौवा जैसे ही आकर बैठता है, मैं हिलना-डुलना बन्द कर देता हूँ, और तिरछी निगाहों से उसका तमाशा देखता रहता हूँ। इतना ज़रूर है कि

अगर कोई पूछे कि मुझे सबसे ज्यादा मज़ा किसमें मिलता है, तो मैं कहूँगा चींटी में। सिर्फ मज़ा कहना गलत होगा। कारण..। नः कारण अभी नहीं बताऊँगा। पहले ही आश्चर्यजनक बातें बता दूँ, तो सारा मज़ा किरकिरा हो जाएगा। इससे तो बेहतर यही है कि शुरू से ही बताऊँ।

आज से लगभग एक साल पहले मैं बुखार की चपेट में फँस गया था। यह कोई नई चीज़ हो ऐसी बात नहीं। मुझे अक्सर बुखार आ जाया करता था। सर्दी और बुखार। माँ कहती, सुबह-शाम मैदान में भीगने और भीगी घास और ज़मीन पर बैठे रहने के कारण यह सब होता है।

हर बार की तरह इस बार भी बुखार के शुरुआत के दिनों में अच्छा ही लग रहा था। ठंडा-ठंडा, बदन में ऐंठन और सुस्ती का भाव। उसके साथ स्कूल न जाने का मज़ा तो है ही। बिस्तर पर लेटा खिड़की के बाहर तर्री के एक वृक्ष पर गिलहरी को खेलते हुए देख रहा था। तभी माँ ने आकर एक कसैली दवा पीने को दी। मैंने भले लड़के की तरह दवा पीकर गिलास से पानी के कई घूँट हलक से नीचे उतारे और बाकी पानी की कुल्ली कर खिड़की के बाहर फेंक दिया। माँ खुश होकर कमरे से बाहर चली गई। उसके बाद चादर को खींच कर भली भाँति बदन पर डाला। फिर गाव तकिये को बगल में दबाकर लेटने जा ही रहा था कि एक चीज़ पर मेरी नज़र गई।

देखा, कुल्ली का थोड़ा-सा पानी खिड़की पर पड़ा हुआ है, और उस पानी में एक छोटी काली चींटी गोते लगा रही है। यह बात मुझे इतनी अद्भुत लगी कि अच्छी तरह देखने के ख्याल से मैं अपनी आँखों को चींटी के बिल्कुल करीब ले गया। देखते-देखते मुझे अचानक लगा, वह चींटी चींटी नहीं, कोई आदमी है। और न केवल आदमी बल्कि मुझे ऐसा लगा कि झंटू के बहनोई साहब मछली पकड़ने गए हैं और फिसलकर कीचड़ में गिर पड़े हैं, अच्छी तरह तैरना न जानने के कारण डुबकियाँ लगा रहे हैं और हाथ-पाँव पटक रहे हैं। याद है, झंटू के बहनोई साहब को झंटू के बड़े भैया और नौकर नरहरि ने बचाया था।

जैसे ही मुझे यह बात याद आई, मेरे मन में इच्छा जागी कि चीटी को बचा लूँ। बुखार की हालत में ही झट से बिस्तर से उठकर खड़ा हो गया और बगल के कमरे में
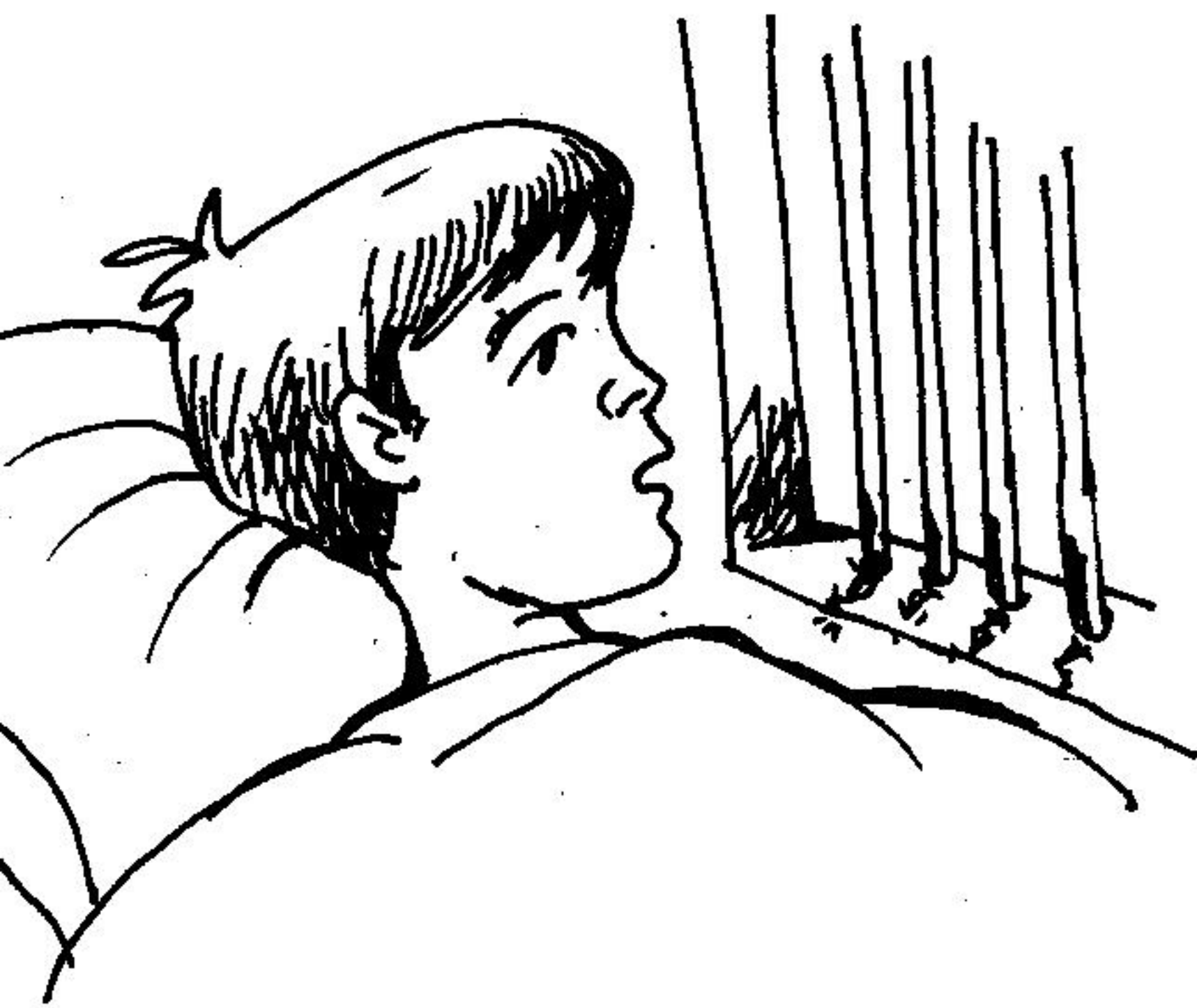
प्रवेश किया। वहाँ पिताजी के राइटिंग पैड से जरा सा ब्लाटिंग पेपर फाड़ कर एक ही दौड़ में अपने कमरे में वापस चला आया और छलाँग लगाकर ब्लैटिंग पेपर के टुकड़े को पानी पर रख दिया रखने के साथ ब्लाटिंग पेपर ने पानी को सोख लिया।

जान बचने के कारण चींटी एक क्षण के लिए हक्की-बक्की रह गई। एक दो बार इधर-उधर मुड़ती हुई सीधी नाली में चली गई। उस दिन फिर कोई चींटी नहीं आई।

दूसरे दिन मेरा बुखार बढ़ गया। दोपहर में माँ काम धाम खत्म कर आई और बोली, खिड़की की ओर फटी-फटी आँखों से क्यों ताक रहे हो? इतना बुखार है। चाहे नींद आए, चाहे न आए, आँख बन्द कर चुपचाप लेटे रहो।

माँ को खुश करने की खातिर मैंने आँखें बन्द कर लीं। मगर उसके जाते ही आँख खोलकर नाली की तर ताकने लगा। तीसरे पहर सूरज जब पेड़ के पीछे चला गया, एक चींटी को नाली के छेद से झाँकते हुए देखा। अचानक वह बाहर निकल आई और खिड़की पर चहल-कदमी करने लगी। सभी चींटियाँ हालाँकि एक जैसी होती हैं, फिर भी मुझे न जाने क्यों ऐसा महसूस हुआ कि यह कल वाली ही चींटी है, जो मुसीबत में फँस गई थीं। मैंने चूँकि मित्र का काम किया था, इसलिए आज हिम्मत बाँध कर मेरे पास आई है।

मैंने पहले से ही योजना बना ली थी। भंडार घर से 'एक चम्मच चीनी ले आया था, और उसे कागज में मोड़कर अपने तकिये के नीचे रख दिया था। उससे एक बड़ा दाना निकाल कर मैंने खिड़की पर रख दिया।

चींटी अचानक ठिठककर खड़ी हो गई। उसके बाद धीरे-धीरे चीनी के दाने के पास आकर उसे चारों तरफ से छू-छाकर देखा। उसके बाद न जाने क्या सोचा और मुड़कर

नाली के अन्दर चली गई।

मैंने सोचा, वाह जी वाह, खाने के लिए इतनी अच्छी चीज़ दी और हज़रत उसे छोड़कर लापता हो गए! फिर आने की ज़रुरत ही क्या थी?

कुछ देर के बाद डाक्टर साहब आए। मेरी नाड़ी और जीभ देखी, छाती और पीठ की स्टेथस्कोपी से परीक्षा की। सब कुछ देखने और सुनने के बाद कहा कि मुझे कसैली दवा और पीनी है। दो दिन के बाद ही बुखार उतर जाएगा। सुनकर मेरा मन खराब हो गया। बुखार उतरने का मतलब है स्कूल जाना और स्कूल जाने का मतलब है दोपहर की बरबादी दोपहर को ही चींटी मेरी खिड़की से होकर आती है। खैर, डॉक्टर बाबू के कमरे से जाते ही मैंने फिर खिड़की की तरफ देखना शुरू कर दिया और मेरा मन फिर खुशियों से भर उठा। अबकी एक नहीं अनगिनत चींटियाँ कतार बाँधकर नाली से होकर अन्दर आ रही हैं। सामने की चींटी मेरी वही जानी-पहचानी चींटी है। उसी ने अन्य चींटियों के पास खबर पहुँचायी होगी और अब सबको अपने साथ लेकर आई है।

थोड़ी देर तक गौर देखने के बाद चींटी की बुद्धि का नमूना दिखाई पड़ा। सभी चींटियों ने मिलकर चीनी के दाने को ठेलना शुरू किया और ठेलती हुई नाली की तरफ ले गई। यह इतनी मज़ेदार बात थी कि बिना देखे समझ में नहीं आ सकती। मन-ही-मन सोचने लगा, मैं अगर चींटी होता तो अवश्य ही सुनता कि वे कह रही हैं-मारो जवान, हैया। और भी थोड़ा, हैया। चले इंजिन, हैया।

बुखार उतरने के बाद शुरू में कई दिनों तक बहुत खराब लगता रहा। क्लास में बैठा-बैठा सिर्फ अपनी खिड़की की बात सोचता रहता था। पता नहीं, कितनी तरह की चींटियाँ वहाँ आ-जा रही होंगी। इतना जरूर है कि आने के समय हर रोज़ मैं खिड़की पर चीनी के दो तीन दाने रख आता था। तीसरे पहर जब मैं लौटकर आता तो उन दानों को वहाँ से लापता पाता था।

क्लास में मैं ज्यादातर बीच की एक बेंच पर बैठा करता था। मेरी बगल में शीतल बैठता था। एक दिन मुझे जाने में देर हो गई, और वहाँ पहुँचने पर शीतल की बगल में फणी को बैठा हुआ पाया। क्या करता पीछे दीवार के की तरफ़ एक सीट खाली थी, उसी पर जाकर बैठ गया।

टिफिन के पहले इतिहास का क्लास था हाराधन बाबू अपनी महीन आवज़ में हैनिबेल की वीरता की कहानी सुना रहे थे। हैनिबेल ने कार्थेज से सेना लेकर आल्प्स पर्वत पार किया था और उसके बाद इटली पर चढ़ाई की थी। सुनते-सुनते मुझे लगा, हैनिबेल की सेना इसी कमरे में है और मेरे निकट से होकर चली जा रही है।

इधर-उधर ताकते ही पीछे की दीवार पर मेरी आँखें टिक गई। देखा, चींटियों की एक लम्बी कतार दीवार से नीचे उतर रही है। ठीक सेना की तरह काली-काली, छोटी-छोटी अनगिनत चींटियों की कतारें। लगातार एक ही ढंग से चली जा रही हैं और रुकने का नाम ही नहीं ले रही हैं।

टिफिन की घंटी बजते ही मैं बाहर निकल आया- क्लास की पीछे की तरफ। जाकर उस दरार को ढूँढ़ निकाला। देखा चींटियाँ दीवार की दरार से निकलकर घास के अन्तराल से सीधे अमरुद के दरख्त की ओर जा रही हैं।

चींटियों की कतार का अनुसरण करते हुए जब पेड़ के तने के पास पहुँचा तो जिस चीज़ पर नज़र पड़ी उसे किले कि अलावा क्या कहा जाए।

देखा, किले की तरह ही ऊँचा मिट्टी का एक टीला है, उसके नीचे की तरफ एक फाटक। और उस फाटक से कतार बाँधकर चींटियों की सेना अन्दर प्रवेश कर रही है।

मेरे मन में इच्छा जगी कि किले के अन्दरूनी हिस्से को ज़रा देख लूँ। जेब में जो पेंसिल थी, उसी की नोक से मैंने टीले के ऊपर की मिट्टी को धीरे-धीरे हटाना शुरू किया।

शुरू में कुछ भी न मिला, परन्तु उसके बाद जिस चीज़ पर मेरी नज़र पड़ी उसने मुझ आश्चर्य में डाल दिया। किले के अन्दर छोटे-छोटे अनेक खाने बने हैं और एक खाने

से दूसरे खाने में जाने के लिए अनगिनत सुरंगे बिछी हैं। कितने आश्चर्य की बात है! इन छोटे-छोटे हाथ-पैरों से इस तरह के मकान इन लोगों ने कैसे बनाए? इनमें इतनी अक्ल कहाँ से आई? क्या इन लोगों के भी स्कूल और शिक्षक हैं? ये लोग भी क्या लिखते-पढ़ते हैं, हिसाब बनाते हैं, तस्वीर बनाते हैं और कारीगरी सीखते हैं? फिर क्या सिवाय चेहरे के आदमी और इनमें कोई अन्तर नहीं है? शेर, भालू, हाथी, घोड़ा वग़ैरह अपने-अपने घर अपने हाथों से कहाँ बना पाते हैं? यहाँ तक कि पालतू कुत्ते भी नहीं।

चिड़िया जरूर खोता बनाती हैं। मगर उनके एक खोंते में कितनी चिड़िया वास कर सकती हैं? चिड़िया क्या इन लोगों के जैसा किला बना पाती हैं जिनमें हज़ारो चिड़िया एक साथ वास कर सकें?

किले का कुछ हिस्सा टूट जाने कारण चींटियों में खलबली मच गई थी। मुझे बड़ा दुख हुआ। मन-ही-मन सोचा, इन लोगों की मैंने हानि की है तो अब भलाई भी करनी चाहिए। ऐसा यदि नहीं करूँगा तो चींटियाँ मुझे अपना दुश्मन समझ लेंगी और मैं उनका दुश्मन नहीं होना चाहता। असल में मैं उनका मित्र हूँ।

इसलिए दूसरे दिन मैंने उस संदेश का आधा भाग, जिसे माँ ने मुझे खाने को दिया था, सखुए के एक पत्ते में मोड़कर जेब में रख लिया।

स्कूल पहुँचने पर, घंटा बजने के पहले ही संदेश के उस टुकड़े को बांबी के पास रख दिया। बेचारों को भोजन की तलाश में बहुत दूर जाना पड़ता है आज घर से बाहर निकलते ही उन्हें अपने सामने भोजन का पहाड़ दीख पड़ेगा। यह क्या कोई कम उपहार है?

इसके कुछ दिन बाद ही गरमी की छुट्टी हुई और चींटियों से मेरी दोस्ती और भी गहरी हो गई।

चींटियों को देख-देखकर उनके विषय में जो सब आश्चर्यजनक बातें मालूम हुई, बीच-बीच में मैं बड़े-बुजुर्गों को वही बातें बताता था। मगर वे मेरी बात पर ध्यान ही नहीं देते थे। सबसे ज़्यादा गुस्सा मुझे उस वक्त आता जब वे मेरी बाते हँसकर उड़ा देते। इसलिए एक दिन तय किया कि अब किसी को कुछ भी न बताऊँगा। जो करने का होगा खुद ही करूँगा, जो कुछ जानकारी प्राप्त होगी, उसे अपने तक ही सीमित रखूँगा।

एक दिन एक घटना घट गई।

तब दोपहर का वक़्त था। मैं झंटु के मकान की दीवर पर बनी माटे की एक बांबी के पास बैठा था और माटों का खेल देख रहा था। बहुत से आदमी कहेंगे कि माटे की बाँबी के पास अधिक देर तक बैठा नहीं जा सकता, क्योंकि माटा काट लेता है। यह बात सही है कि इसके पहले माटा मुझे काट चुका है, मगर कुछ दिनों से देख रहा हूँ कि अब वह मुझे नहीं काटता। मैं निश्चिंतता के साथ बैठा हुआ माटों को देख रहा था कि तभी छिकु वहा आ धमका।

छिकु के बारे में इसके पहले मैंने कुछ भी न बताया है। उसका अच्छा नाम श्री कुमार है। वह हमारे ही दर्जे में पढ़ता है, मगर हम लोगों से काफ़ी बड़ा है, क्योंकि दाढ़ी मूँछि उग आई हैं। छिंकु सिर्फ लीडरी करता रहता है। यही वजह है कि कोई उसे प्यार नहीं करता। मैं भी नहीं। लेकिन ऐसा होने पर भी मैं उससे कभी उलझता नहीं, क्योंकि मुझे मालूम है कि उसकी देह में बहुत ताकत है।

मुझे देखकर छिकु बोला, 'अरे बेवकूफ, यहाँ बैठकर किस का इंतज़ार कर रहा है?'

मैंने छिकु की बातों पर ध्यान नहीं दिया मगर देखा, वह मेरी ओर ही आ रहा है।

मैं माटों की तरफ़ देखने लगा। छिकु ने मेरे पास आकर पूछा, 'क्या हो रहा है? हाव-भाव अच्छा नहीं लग रहा है।'

मैंने अब छिपाने की कोशिश नहीं की और सच्ची बात बता दी।

सुनकर छिकु दाँत पीसने लगा और बोला, 'माटा देख रहे हो-इसका मतलब? इसमें देखने की क्या चीज़ है? चींटी क्या तुम्हारे घर पर नहीं है कि यहाँ देखने पहुँच गए?'

मुझे बड़ा गुस्सा आया। मैं कुछ भी करूँ, इससे तुम्हारा क्या बिगड़ता है?

हर चीज़ में नाक घुसेड़ता है ओर लीडरी किए चलता है!

मैंने कहा, 'देखना मुझे अच्छा लगता है, इसलिए देखता हूँ। चींटी का रहस्य तुम्हारी समझ में नहीं आएगा। तुम्हें जो अच्छा लगे, जाकर वही करो। यहाँ परेशान करने क्यों आ गए?'

मेरी बात सुनकर छिकु बिलाव की तरह झुँझला उठा और बोला, 'ओह, देखना अच्छा लगता है! चींटी देखना अच्छा लगता है? फिर लो, देखो!' यह कहकर छिकु ने

लाठी की चोट से माटे की बाँबी को तोड़कर बरबाद कर दिया। और उस चोट से कम-से-कम पाँच सौ चींटियों की जान चली गई। लाठी मारकर छिकु हँसता हुआ वहाँ से चला जा रहा था। तभी मेरे सिर पर भूत सवार हो गया।

मैंने छलाँग लगाई और छिकु के बालों को कसकर पकड़ लिया और फिर उसके सिर को झंटु की दीवार से चार-पाँच बार ज़ोरो से टकरा दिया।

उसके बाद जब मैंने छिकु को छोड़ा तो वह रोता हुआ अपने घर की तरफ़ चला गया।

मै जब घर पहुँचा, उसके पहले ही छिकु शिकायत पहुँचा गया था। मगर आश्चर्य की बात है कि माँ ने न तो मुझे मारा और न डाँटा-फटकारा ही। दरअसल उसे विश्वास ही नहीं हुआ , क्योंकि इसके पहले मैंने कभी किसी से मार-पीट नहीं की थी। इसके अलावा माँ को यह मालूम था कि मैं छिकु से डरता हूँ।

मगर बाद में माँ ने जब मुझसे इसके बारे में पूछताछ की तो मैंने सच बात कह दी।

सुनकर माँ हैरान हो गई। बोली, 'ऐं, तुमने छिकु का सिर फोड़ दिया है?'

मैंने कहा, 'हाँ। छिकु ही क्यों, जो भी आदमी चींटी की बाँबी तोड़ेगा, उसका सिर फोड़ दूँगा।'

इस बात से माँ को बड़ा गुस्सा आया। उसने मुझे बेहद पीटा और कमरे के अंदर बंद कर दिया। उस दिन शनिवार था। पिताजी जल्दी ही कचहरी से लौट आए थे। जब माँ से उन्हें सारी बातें मालूम हुईं तो उन्होंने मेरे कमरे के दरवाज़े पर बाहर से ताला लगा दिया।

मार खाने के कारण हलाँकि मेरी पीठ दर्द कर रही थी, मगर इसके लिए मेरे मन में कोई दुख न था। अगर दुख था तो चींटी के कारण ही। उस बार साहबगंज में, जहाँ परिमल रहता है, दो ट्रेनें आपस में टकरा गई थीं और लगभग तीन सौ आदमियों की मृत्यु हो गई थी। आज छिकु के लाठी के वार से इतनी-इतनी चींटियाँ मर गईं!

कितना अन्याय है, कितना अन्याय!...

बिस्तर पर लेटे-लेटे जब यही सब सोच रहा था तो मेरा सिर चकराने लगा और
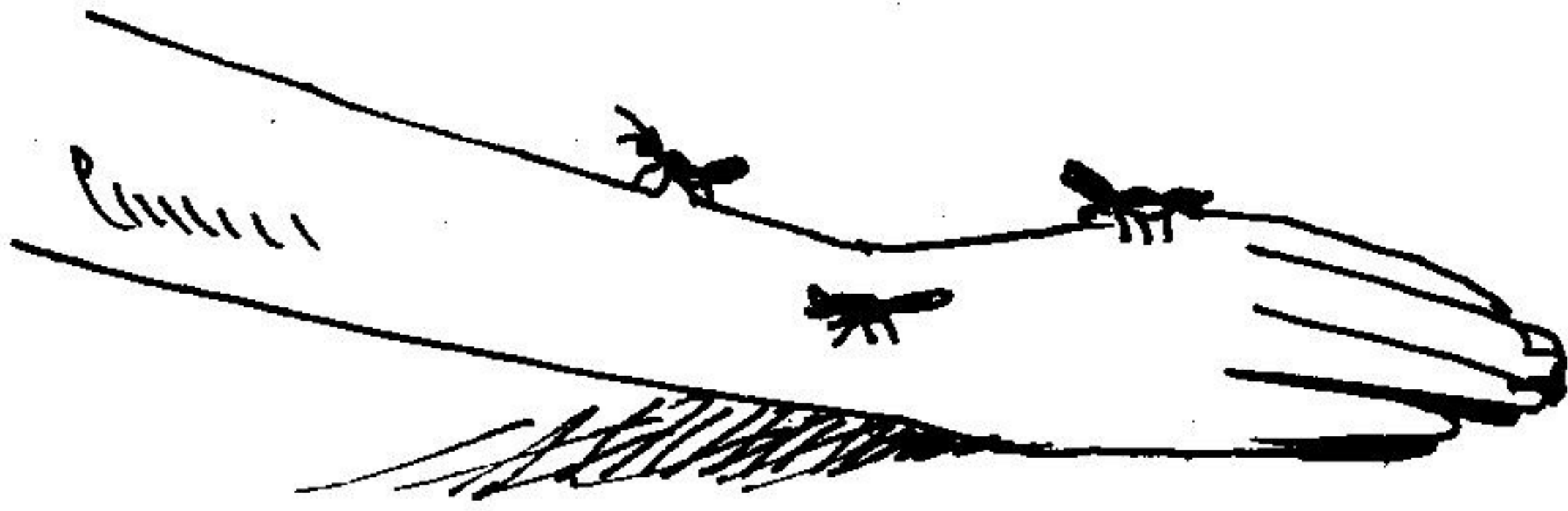
मैं बदन में ठंड महसूस करने लगा। चादर तानकर मैंने करवट बदली।

उसके बाद मेरी आँखों में नींद उतर आई, इसका पता नहीं चला।

एक बहुत ही महीन और मीठी आवाज़, बहुत कुछ संगीत की तरह, आरोह-अवरोह के साथ सुनाई पड़ रही है।

मैंने ध्यान से सुनने की कोशिश की मगर पता नहीं चला कि वह आवाज़ किधर से आ रही है। शायद कहीं दूर संगीत का कार्यक्रम चल रहा है। लेकिन इस तरह का गीत इसके पहले सुनने को नहीं मिला है।

लीजिए, मैं गीत सुनने में मग्न हूँ और ये हजरत कब नाली से आकर उपस्थित हो गए हैं, इसका पता भी नहीं चला।

अब मैंने ठीक से पहचाना–यह मेरी वही जानी-पहचानी चींटी है, जिसे मैंने पानी से बचाया था। मेरी ओर ताकती हुई, दोनों पैरों को माथे से छुलाकर मुझे नमस्कार कर रही है! इसका नाम क्या रखा जाए? काली? केष्टो? काला चाँद? सोचना होगा। मित्र है मगर कोई नाम नहीं, यह कैसे हो सकता है?

मैंने अपनी हथेली खिड़की पर रख दी। अपने अगले पैरों को सिर से नीचे की तरफ़ हटाकर चींटी धीरे-धीरे मेरी ओर आने लगी। उसके बाद मेरी कनिष्ठ उँगली से होती हुई मेरे हाथ पर आई और मेरी हथेली की आँकी-बाँकी नदी जैसी रेखाओं पर

चहल-कदमी करने लगी। तभी दरवाज़े पर खट से आवाज़ हुई और मैं चौंक उठा। चीटी भी हड़बड़ाती हुई हाथ से नीचे उतर आई और नाली के अंदर चली गई।

उसके बाद ताला खोलकर माँ अंदर आई और मुझे एक कटोरा दूध पीने के लिए दिया। फिर मेरी आँखों को देखने और बदन को छूने पर उसको पता चला कि मुझे बुखार आ गया है।

दूसरे दिन सेवेरे डाक्टर साहब आए। माँ ने कहा, 'सदानंद रात-भर छटपट-छटपट करता रहा है और 'काली-काली' बुड़बुड़ाता रहा है। माँ ने शायद सोचा कि मैं देवी-देवता का नाम ले रहा था। असली बात माँ को मालूम ही नहीं है।

डाक्टर साहब ने मेरी पीठ पर जब स्टेथस्कोप लगया तो उस समय भी मुझे कल के जैसा ही मृदु संगीत सुनाई पड़ा। आज कल से कुछ तेज़ आवाज थी और स्वर भी कुछ दूसरी ही तरह का लगा, खिड़की की तरफ़ से ही संगीत का स्वर आ रहा है। लेकिन डाक्टर साहब ने मुझे चुपचाप पड़े रहने को कहा था, इसलिए मैं मुड़कर नहीं देख सका। डाक्टर साहब मेरे शरीर की जाँच करके खड़े हो गए ओर मैंने तिरछी निगाहों से खिड़की की तरफ देखा। बाप रे, आज तो एक नया ही मित्र आया है–च्यूंटा! और वह मुझे नमस्कार कर रहा है! फिर क्या तमाम चींटियाँ ही मेरी मित्र हैं?

गीत भी क्या यही च्यूँटा गा रहा है?

मगर माँ तो गीत के बारे में कुछ भी न कह रही है। फिर क्या वह सुन नहीं पा रही हैं?

पूछने के ख़्याल से मैं माँ की तरफ मुड़ा ही था कि तभी वह फटी-फटी आँखों से खिड़की की ओर ताक रही है। उसके बाद अचानक मेज़ से मेरी हिसाब की कापी उठाकर मेरी तरफ झुकी और कापी पलटकर उसे मार डाला।

उसके साथ ही गीत का सिलसिला थम गया।

माँ ने कहा , 'बाप रे, चींटी का उपद्रव कितना बढ़ गया है! कहीं तकिये पर चढ़कर कान के अंदर जाकर काट ले तो हालत खराब हो जाए!

डाक्टर साहब जब इंजेक्शन देकर चले गए तो मैंने मरे हुए च्यूंटे की ओर देखा। इतना सुंदर गीत गाते-गाते बेचारा चल बसा। यह तो ठीक मेरे इंद्रनाथ दादाजी की जैसी

हालत हुई। वे भी बड़े ही मधुर गीत गाते थे। यह ज़रूर था कि उनका गीत हमारी समझ में ठीक से नहीं आता था, लेकिन बड़े बुजुर्गों का कहना था कि वह उच्चकोटि का शास्त्रीय संगीत था। वे भी इसी तरह एक दिन तानपूरा लेकर गीत गा रहे थे कि एकाएक उनकी मृत्यु हो गई। जब उन्हें शमशान की ओर ले जाया गया था तो उनके पीछे-पीछे शहर का एक कीर्त्तनियाँ दल था जो हरिनाम का संकीर्त्तन गाता हुआ जा रहा था। मैंने इसे अपनी आँखों से देखा था और वह बात अब भी मुझे याद है, हालाँकि उस समय मैं बिल्कुल छोटा था।

आज एक अद्भुत घटना घटी। इंजेक्शन लेकर जब मैं नींद में खो गया तो सपने में देखा, चींटियों का एक विशाल झुंड मृत च्यूंटे को इंद्रनाथ दादाजी की तरह ही शमशान की ओर लेकर जा रहा है। दस या बारह चींटियों ने उन्हें कंधे पर उठा लिया है और बाकी चींटियाँ कीर्त्तन जैसा गीत गाती हुई पीछे-पीछे चली जा रही हैं।

तीसरे पहर माँ ने जैसे ही मेरे सिर पर हाथ रखा कि मेरी नींद खुल गई।

मैंने खिड़की की तरफ़ ग़ौर से देखा वहाँ मरी हुई चींटी नहीं थी।

उस बार मेरा बुखार आसानी से उतरने का नाम नहीं ले रहा था। उतरे तो कैसे, दोष तो मेरे घरवालों का ही है। घर के सभी लोगों ने चींटियों को मारना शुरू कर दिया था। दिन-भर अगर चींटियों की उस तरह की चीख़ें सुननी पड़ें तो बुखार बढ़ेगा ही।

मुझे एक और मुसीबत का सामना करना पडता है। हमारे घर के लोग जब भंडारघर या आँगन में चींटियों को मारतें हे तो दूसरी चींटियों का झुंड मेरी खिड़की के पास आकर बेहद रोने लगता है। समझ गया, ये चींटियाँ क्या चाहती हैं कि मैं इनकी तरफ़ से कोई काम करूँ–या तो चींटियों का मारा जाना रुकवा दूँ या उन्हें जो लोग मारते हैं, उन्हें डाँट-फटकार सुनाऊँ। मगर बुखार रहने के कारण मेरी देह में ताकत नहीं थी। और ताकत अगर रहती तो भी छोटा होने के कारण बड़े-बुजुर्गों को कैसे डाँट-फटकार सुनाता?

मगर आखिर में कुछ-न-कुछ इंतज़ाम करना ही पड़ा।

दिन कौन-सा था, याद नहीं। इतना ही याद है कि उस दिन खूब तड़के मेरी नींद टूट गई थी। नींद टूटते ही सुना, फटिक की माँ चिल्ला-चिल्लाकर कह रही थी कि रात

के वक़्त एक च्यूंटा ने उनके कान के अंदर जाकर काट लिया है।

यह बात सुनकर मुझे बेहद खुशी हुई थी। मगर उसके बाद ही झाड़ू पीटने की आवाज़ सुनकर समझ गया कि चींटियों को मारने का अभियान शुरू हो गया है।

उसके बाद एक अजीब घटना घटी। अचानक कानों में धीमी आवाज़ आई-बचाओ! बचाओ! हम लोगों की रक्षा करो! मैंने खिड़की की तरफ़ गौर से देखा चींटियों का झुंड खिड़की के ऊपर आकर घबराहट के मारे चहल-क़दमी कर रहा है।

चींटियों के मुँह से यह बात सुनकर मैं ख़ामोश नहीं रह सका। बीमारी की बात भूलकर मैं बिस्तर से कूदकर बरामदे में चला आया। शुरू में मेरे समझ में यह न आया कि क्या करूँ, उसके बाद सामने एक घड़ा देखकर उसे उठाकर पटक दिया।

उसके बाद जो भी टूटने लायक चीजें थीं, उन्हें तोड़ना शुरू कर दिया।

मैंने बहुत ही कारगर उपाय खोज निकाला था, क्योंकि उसके बाद मेरा कांड देखकर चींटियों को मारने का अभियान रुक गया। मगर उसी क्षण माँ-बाबूजी, छोटी बुआ जी, साबीदी–जितने भी लोग थे–घबराकर बाहर निकल आए और मुझे कसकर पकड़ लिया। उसके बाद मुझे गोद में उठाकर खाट पर पटक दिया ओर दरवाज़े को ताले से बंद कर दिया।

मैं मन-ही-मन हँसा और मेरी खिड़की पर चींटियों ने खुशी के मारे नाचना शुरू कर दिया और मुझे शाबाशी देने लगीं।

उसके बाद मैं ज़्यादा दिनों तक घर में नहीं रहा। क्योंकि एक दिन डाक्टर साहब ने मेरी जाँच करने के बाद कहा कि घर पर रहने से चिकित्सा में सुविधा नहीं होगी और मुझे अस्पताल जाना होगा।

अभी मैं जहाँ हूँ, वह अस्पताल का एक कमरा है मैं यहाँ चार दिनों से हूँ।

पहले दिन मुझे यह कमरा बहुत बुरा लगा था। क्योंकि यह इतना साफ़-सुथरा है कि लगता है चींटी यहाँ हो ही नहीं सकती। चूँकि कमरा नया है इसलिए छेद-दरार नहीं है। कोई अलमारी भी नहीं है कि जिसके नीचे या पीछे चींटी रह सकें। नाली अलबत्ता है। मगर वह भी बेहद साफ़-सुथरी है। हाँ, एक खिड़की है और खिड़की के बाहर ही आम के एक पेड़ का ऊपरी हिस्सा है। उसकी एक डाल खिड़की के बिल्कुल करीब है।

समझ गया, अगर चींटी होंगी तो उसी डाल पर होंगी।

मगर पहले दिन मैं खिड़की के पास जा ही नहीं सका। कैसे जाऊँ। दिन-भर डाक्टर, नर्स और घर के आदमी मेरे कमरे में अन्दर आते-जाते रहे हैं।

दूसरे दिन भी यही हालत रही।

मेरा मन बेहद उदास हो गया। मैंने दवा की एक शीशी तोड़ डाली। नये डाक्टर साहब बेहद झुँझला उठे। नये डाक्टर साहब भले आदमी नहीं हैं, यह बात मैं उनकी मूँछ और चश्मे को देखकर ही समझ गया था।

तीसरे दिन एक घटना घट गई।

तब कमरे में सिवाय एक नर्स के और कोई नहीं था और वह भी कोने की एक कुर्सी पर बैठी किताब पढ़ने में तल्लीन थी। मैं चुपचाप लेटा हुआ था और यह तय नहीं कर पा रहा था कि क्या करूँ। तभी धप से आवाज़ हुई और मेर आँखें उसकी ओर मुड़ गई। देखा, उसके हाथ से किताब गोद पर गिर गई है और वह नींद में खो गई है।

यह देखकर मैं आहिस्ता से बिस्तर से उठा और दबे पावों खिड़की के पास पहुँच गया।

उसके बाद खिड़की के. निचले पल्ले पर पाँव रखकर, और अपने शरीर को यथासंभव बाहर निकालकर, मैंने अपना हाथ आगे बढ़ाया। मेरी हाथ की पहुँच की सीमा में आम की एक डाल आ गई और उसे पकड़कर मैंने खींचना शुरू किया। तभी मेरा दाहिना पाँव अचानक पल्ले से खिसक गया और खट् से आवाज़ हुई। उस आवाज़ से नर्स की नींद टूट गई।

अब जाऊँ तो कहाँ जाऊँ।

नर्स के मुँह से एक विकट आवाज़ निकली और वह दौड़ती हुई मेरे पास आई। उसके बाद मुझे पकड़कर खींचती हुई ले आई और बिछावन पर पटक दिया।

डाक्टर साहब ने मुझे एक इंजेक्शन दिया। उन लोगों की बातचीत से पता चला कि मैं खिड़की से नीचे कूदने जा रहा था। कितने बेवकूफ़ हैं ये लोग! इतने ऊँचाई से आदमी कूदे तो उसकी हड्डी-पसली टूटेगी ही साथ-ही-साथ जान जाने की भी नौबत आ जाएगी।

डाक्टर साहब के चले जाने के बाद मुझे नींद आने लगी, और अपने मकान की

खिड़की की बात भी याद आने लगी। मेरा मन बहुत ही उदास हो गया। पता नहीं, कब घर लौटकर जाऊँगा!

सोचते-सोचते मैं नींद में खो गया था कि तभी एक धीमी आवाज़ सुनाई पड़ी, 'सिपाही हाज़िर है हुजूर! सिपाही हाजिर है!'

मैंने आँख खोलकर देखा। मेरी खाट की बगलवाली मेज की सफ़ेद चादर पर, दवा की शीशी के बिल्कुल पास ही, शान के साथ दो लाल माटे खड़े हैं।

ये दोनों ज़रूर ही पेड़ से मेरे हाथ पर होते हुए यहाँ आए हैं। मुझे इसका पता भी नहीं चला।

मैंने कहा, 'सिपाही?'

जबाब मिला, 'हाँ हुजूर!'

'तुम लोगों का नाम क्या है?' मैंने पूछा।

एक ने कहा, लालबहादुर सिंह और दूसरे ने अपना नाम लालचंद पांडे बताया।

मुझे बेहद खुशी हुई। मैंने उन दोनों को सावधान कर दिया कि बाहर के आदमी आयें तो वे छिप जायें वरना उनकी जान चली जाएगी। लालचंद और लालबहादुर ने मुझे लंबी सलामी दी और कहा, 'ठीक है हुजूर।'

उसके बाद दोनों मिलकर एक बहुत मधुर गीत गाना शुरू कर दिया। आज मैं उस गीत को सुनते-सुनते नींद में खो गया।

अब जल्दी-जल्दी कल की घटना बता दूँ, क्योंकि घड़ी पाँच बार टन-टन आवाज़ कर चुकी है। डाक्टर के आने का समय हो चुका है।

कल तीसरे पहर मैं लेटा-लेटा लालबहादुर और लालचंद की कुश्ती देख रहा था। मैं बिस्तर पर था और वे लोग मेज़ पर। दोपहर में मुझे सोना चाहिए था, मगर कल इंजेक्शन लेने और दवा खाने के बावजूद नींद नहीं आई थी। यह कह सकते हैं कि जान-सुनकर नींद को मैंने अपने पास फटकने नहीं दिया था। दोपहर में यदि सो जाऊँ तो फिर चींटियों के साथ कब खेलूँगा?

कुश्ती ज़ोर-शोर से चल रही थी। जीत किसकी होगी, समझ में नहीं आ रहा था। तभी खट-खट कर जूते की आवाज़ हुई। लो, डाक्टर साहब आ रहे हैं!

मैंने अपने मित्रों को इशारा किया और लाल बहादुर झट से मेज़ के नीचे चला गया।

मगर बेचारा लालचंद कुश्ती करते-करते चित होकर गिर पड़ा था और हाथ-पैर शून्य में पटक रहा था। यही वजह है कि वह जल्दी से भाग नहीं सका और उसके चलते एक बहुत ही बुरा कांड हो गया।

डाक्टर बाबू ने वहाँ आने पर लालचंद के मेज़ पर देखा तो पता नहीं अंग्रेजी में झुँझलाकर क्या कहा और एक ही झटके में उसे फ़र्श पर पटक दिया।

लालचंद बेहद ज़ख्मी हो गया, यह बात उसकी चीख़ से ही समझ में आ गई। मगर मैं कर ही क्या सकता हूँ? इस बीच मेरी नाड़ी की परीक्षा करने के ख़्याल से डाक्टर साहब ने मेरा हाथ थाम लिया था। एक बार हाथ ठेलकर मैंने उठने की कोशिश भी की मगर दूसरी ओर से नर्स ने आकर मुझे कसकर पकड़ लिया।

नाड़ी की जाँच कर डाक्टर साहब हर रोज़ की तरह मुँह लटकाये, अपनी मूछों के इर्द-गिर्द के हिस्से को खुजलाते हुए दरवाजे के तरफ जा ही रहे थे कि पता नहीं क्यों हठात् उछल पड़े और उनके मुँह से तीन-चार किस्म की बंगला-अंग्रेज़ी के शब्द बाहर निकल आए-'इह! ओह! आउच!'

उसके बाद तो कांड ही हो गया। स्टेथस्कोप छिटककर नीचे गिर पड़ा, चश्मा गिरकर टूट गया, कोट खोलने के समय बटन टूट गया, टाई खोलने में गले में गाँठ लग गई, अन्त में कमीज़ खोलने पर गंजी का छेद तक बाहर निकल आया। फिर भी डाक्टर का उछलना और चिल्लाना बंद नहीं हुआ। मैं तो अवाक् रह गया।

नर्स ने पूछा, 'क्या हुआ सर?'

डाक्टर साहब ने उछलते-उछलते कहा, 'ऐन्ट! रेड ऐन्ट! आस्तीन से चढ़कर-ओह! ओह!'

वाह-वाह बात क्या मेरी समझ में नहीं आई? अब मज़ा चखो। आस्तीन से होकर लालबहादुर सिंह गया था-दोस्त का बदला लेने के लिए।

उस समय अगर कोई मुझे देखता तो यह नहीं कह सकता था कि सदानन्द हँसना नहीं जानता।